पंचायतीराज आरक्षण और दलितों की सामाजिक स्थिति : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

3

डॉ. ए. टी. शिंदे*

भारत गाँवों का देश कहा जाता है। क्यों की आज भी हमारे देश की कुल जनसंख्या का तिन चौथाई से अधिक भाग ग्रामों में निवास करता हैं। भारतीय ग्रामीण समाज के अनेक आधारभूत लक्षण है। उन में सबसे महत्वपूर्ण लक्षण पंचायती व्यवस्था है। यही पंचायत व्यवस्था गाँव की संगठन, प्रशासन और सामाजिक सुव्यवस्था बनाएँ रखने में महत्वपूर्ण कार्य प्राचीन काल से करते आई है। संपूर्ण ग्रामीण समाज जीवन को पंचायती व्यवस्था प्रभावित करते आ रही है। यही ग्रामपंचायत व्यवस्था प्रजातंत्रिय शासन व्यवस्था और सामाजिक संगठन की आधारशिला है। भारतीय ग्रामीण समाज के सामाजिक, आर्थिक और राजनितिक गतिविधियों को संचलित, नियंत्रित और निर्देशित करती रही है। यद्यपि भारत में पंचायतों का उल्लेख ऋवेद, बौद्धकाल, मौर्यकाल, गुप्तकाल तथा मुगलकाल में निरन्तर मिलता है। फिर भी उन्हें औपचारिक रुप से संगठित करने का सबसे पहिला प्रयास अंग्रेज अधिकारी लॉर्ड रिपन ने किया। सन 1882 में लॉर्ड रिपन ने स्थानिक स्वायत्ता सरकार का विचार प्रस्तुत किया। परंतु कुछ इंग्रज अधिकारियों के प्रयासो के बावजूद भी अंग्रेज शासनकर्ताओं ने पंचायती व्यवस्था को विकसित नहीं किया। अंग्रजों ने भारत में अपनी राजनितिक पकड सदृढ करने के लिए ग्रामपंचायतों को धिरे–धिरे मृतप्राय कर दिया था। आर्थिक शोशण करने के लिए भारत को आधुनिकता, औद्योगीकरण और नागरिकरण का रुप दिया। इस सें ग्रामों की अर्थव्यवस्था चरमरा गई। ग्रामपंचायतों का अस्तित्व धिरे–धिरे खत्म होता जा रहा था। इन्ही कारण भारतीय ग्रामीण समाज सामाजिक, आर्थिक और राजनितिक समस्याओं से ग्रसित हो गया।

भारतीय ग्रामीण समाज की यही विशेषपूर्ण पंचायत व्यवस्था भारत को आज़ादी मिलने के बाद भारत सरकार ने उसे पुनः पूनर्जिवित करने का फैसला किया। बलवंतराय मेहता की अध्यक्षता में एक कमेटी का गठन किया गया। उसी समिती ने 1957 में पंचायतीराज योजना प्रस्तुत की। 12 जनवरी 1958 को राष्ट्रीय विकास परिषद ने प्रजातंत्रिक विकेंन्द्रिकरण के बारे में बलवंतराय मेहता समिती की सुझावों का समर्थन कर दिया। बलवंतराय मेहता समिती ने ग्रामवासियों में सक्रिय सहभागिता के उद्देश्य से विकास और पुनःनिर्मान को ध्यान में रखते हुए प्रजातंत्रिक विकेंन्द्रिकरण की योजना प्रस्तुत की, जिसे सम्पूर्ण देश में पंचायतीराज व्यवस्था के रुप में जाना गया। इस व्यवस्था के अंतर्गत ही त्रीस्तरिय पंचायतीराज व्यवस्था प्रस्तुत की कई। 2 अक्तुबर 1959 में पंचायतीराज का शुभारंभ राजस्थान में नागौर गाव से हुआ। बाद में सभी राज्यों ने स्विकार किया।

**अध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, इंदिरा गांधी महाविद्यालय, सिडको नांदेड़*

भारत सरकार ने प्रजातंत्रिक विकेंन्द्रिकरण के लिए पंचायतीराज व्यवस्था प्रस्तुत की, लेकिन इस व्यवस्था में अनुसूचीत जाति, जनजाति, इतर मागास वर्ग और महिला के लिए आरक्षण नहीं था। सत्ता का विकेंन्द्रिकरण होने की बजाय सत्ता का केंन्द्रिकरण होने लगा। उच्च जाति और समुह के पास सत्ता रहने लगी। पिछड़ी जाति और समाज के दूर्बल घटक सामाजिक, आर्थिक और राजनीति से वंचित रहने लगे। भारत सरकार ने यह ध्यान में रखकर और पंचायती व्यवस्था को और व्यवहारिक स्वरुप प्रदान करने के लिए इन्ही संस्थाओं को 73 वे संविधान अनुसंधान अधिनियम के द्वारा संवैधानिक स्तर पर मान्यता प्रदान कर दि गई। 73 वाँ संविधान अनुसंधान अधिनियम भारत सरकार के राजपत्र में 26 अप्रैल 1993 को प्रकाशित और प्रवर्तित हुआ है। इस उपर्युक्त व्यवस्था के द्वारा पंचायतीराज संस्थाओं को संवैधानिक मान्यता प्रदान कर दी गई है।

इसी प्रकार भारत सरकार ने पंचायतीराज व्यवस्था में अमुलाग्र बदलाव किए । अनुसूचित जाति और जनजाति के लिए एक तिहाई स्थान आरक्षित किए गए हैं, जिनमें महिलाओं के लिए भी स्थान सुरक्षित होंगे। इस 73 वे संविधान अनुसंधान के बाद ग्रामीण विकास की प्रक्रिया में उनकी सक्रिय भागीदारी बढी हैं। अनुसूचित जाति को भारतीय समाज में दलित भी कहा जाता है। उस दलित समाज को आरक्षण देने का हेतु मात्र राजनीतिक सहभागीता बढ़ाना नहीं था। प्राचीन काल से भारतीय समाज में दलित अस्पष्य समाज की सामाजिक और आर्थिक स्थिति निम्न रही है। इन्ही समाज पर अनेक कठोर प्रतिबन्ध लगाए जाते थें। उन्हे उच्च जाति हिन्दुओं से कुछ कदमों की दूरी बनाएँ रखनी पढ़ती थी। अस्पृश्यता के वेश में जो अत्याचार उन पर किए जाते थें वे आज भी कई जगह हो रहे है। इसी 73 वे संविधान अनुसंधान के बाद दलित सदस्यों के प्रति सवर्ण प्रतिनिधी का सामाजिक व्यवहार किस प्रकार का रहा है। और दलित प्रतिनिधिओं का ग्रामीण प्रश्न और दलित समाज के प्रश्नों के प्रति कितने जागरुक है। यह जानने के लिए प्रस्तुत अध्ययन किया है।

अध्ययन का उद्देश्यः

प्रस्तुत अध्ययन निम्नलिखित उद्दश्यों की पूर्ती हेतू किया गया है।

i) अनेक वर्षों से राजकीय सत्ता और अधिकार से वंचित दलित समाज को सत्ता में सहभागी करने के बाद उनमें जो सुधार हुआ है, उन सुधारों का अध्ययन करना।

ii) अनेक समस्याओं से पिड़ित दलित सदस्यों की वैयक्तिक और सामुहिक जानकारी के आध ाार पर उनकें सामाजिक स्थान का आकलन और विश्लेषण करना।

iii) पंचायती व्यवस्था में आरक्षण देणे के बाद अस्पृश्य दलित समाज और सवर्ण समाज के संबधों का अध्ययन करना।

iv) दलित प्रतिनिधि का सामाजिक आर्थिक विकासात्मक दृष्टिकोण जानना।

v) ग्राम पंचायतों द्वारा आर्थिक विकास की प्रक्रिया में आने वाली कठिनाइयों का अध्ययन कर व्यावहारिक समाधान प्रस्तुत करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएँ:

प्रस्तुत अध्ययन निम्नलिखित परिकल्पनाओं पर आधारित है–

i) ग्रामपंचायतों में आरक्षण देने के बाद दलित समाज के सामाजिक स्थान में सुधार हुआ है।

ii) ग्रामपंचायतों में आरक्षण देने के बाद अस्पृश्यता में कमी आई है।

iii) ग्रामपंचायतों में दलित सहभागिता के बाद ग्रामीण समाज के सामाजिक प्रश्न सफलतापूर्वक सुलझ रहे हैं।

iv) ग्रामीण क्षत्रों में विकास हेतु स्थानिय प्रशासन का होना आवश्यक है। स्थानीय प्रशासन की सफलता स्थानीय प्रतिनिधियों पर निर्भर करती है।

v) शासकीय विकास योजनाओं का लाभ दलितों को मिल रहा है।

अनुसंधान विधि:

प्रस्तुत अध्ययन में पंचायतीराज व्यवस्था में 73 संविधान संशोधन के बाद दलितों की सामाजिक स्थिती का अध्ययन करना प्रमुख उद्देश्य है। अध्ययन विषय की व्यापकता को देखते हुए लोहा तहसिल क्षेत्र का चयन किया है। महाराष्ट्र राज्य में नांदेड जिले का लोहा एक तहसिल क्षेत्र है। 2001 की जनगणना के अनुसार लोहा तहसिल की कुल जनसंख्या 210593 हैं। जिन में 106663 पुरुष हैं, जबकि स्त्रियों की संख्या 100643 हैं। लोहा तहसिल अध्ययन क्षेत्र में 32434 अनुसूचित जाति की संख्या हैं। कुल जनसंख्या का 17.06 प्रतिशत हिस्सा हैं। लोहा तहसिल क्षेत्र में महसूली प्राप्त ग्रामों की संख्या 126 हैं, उनमें 118 ग्रामपंचायत है। प्रस्तुत अध्ययन में कुल ग्रामपंचायतों में से केवल 30 प्रतिशत ग्रामपंचायतों का सहेतुक नमुना चयन पद्धति द्वारा दलित प्रतिनिधिओं का साक्षात्कार हेतु चयन किया है।

प्रस्तुत अध्ययन में तथ्य संकलन करने के लिए प्राथमिक स्त्रोत के संकलन हेतू मुलाखत साक्षात्कार अनुसूचि इसके अतिरिक्त चर्चा, विचार विमर्श तथा निरिक्षण पद्धति का प्रयोग किया गया हैं। अध्ययन की व्यापकता को देखते हुए ग्रामवासिओं को सामुहिक चर्चा के साथ–साथ व्यक्तिगत चर्चा के द्वारा भी तथ्य एवं सुचनाएँ एकत्रित की गई है।

प्रस्तुत अध्ययन हेतु प्राथमिक स्त्रोत के साथ–साथ द्वितीयक स्त्रोतों कि सहायता से तथ्यों को एकत्रित किया हैं। इनमें जिल्हा साख्यिंकी कार्यालय, तहसिल कार्यालय, विविध शासकीय अहवाल, पत्रिकाओं, समाचारपत्रों और अप्रकाशित अनुसंधान साधनों आदि से भी महत्वपूर्ण तथ्य प्राप्त हुए है।

निष्कर्ष :

प्रस्तुत अध्ययन हेतु 38 चयनित ग्राम पंचायतों (कूल 118 ग्रामपंचायतों का 30 प्रतिशत) के दलित समाज के सरपंच, उपसरपंच, सदस्य और सर्वेक्षण के प्राप्त तथ्यों से निष्कर्ष प्राप्त करने हेतु एकत्रित तथ्यों का वर्गीकरण, सारणीयन तथा प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण हेतु विभिन्न सांख्यिकिय विधियों के प्रयोग के पश्चात् अध्ययन के निष्कर्षों की व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है।

i) 74.68 प्रतिशत दलित प्रतिनिधिओं का ये मानना है की ग्रामपंचाती संस्थाओं में दिया गया आरक्षण दलित समाज में सामाजिक और राजकीय जागृति निर्माण करने में महत्वपुर्ण साबित हूआ है। ग्रामीण समाज में दलित और सवर्ण जातियाँ राजकीय हेतु साध्य करने हेतु एक साथ आए हैं। इसका यह परिणाम हुआ है कि ग्रामीण समाज में जो अस्पृश्यता का परिचलन था उनमें काफी कमी आई है। यह पंचायती आरक्षण की बहूत बढ़ी उपलब्धी है।

ii) अध्ययन के उपरांत स्पष्ट होता है कि ग्रामपंचायतों में दलित समाज को आरक्षण देने के बाद दलितों के सामाजिक स्थान में सुधार हुआ है। प्रस्तुत अध्ययन हेतु चयनित 79 उत्तरदाताओं मे से 78.48 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने ग्रामपंचायती आरक्षण के पश्चात दलितों के सामाजिक स्थान में सुधार हुआ है, यह मान्य किया है। शेष 21.52 प्रतिशत उत्तरात्ताओं ने सामाजिक स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ है यह नकारात्मक उत्तर दिए है। इससे यह स्पष्ट होता है कि, बहुत से सदस्यों ने ग्रामपंचायतों में आरक्षण मिलने के बाद दलितों के सामाजिक स्थान में सुधार हुआ यह मान्य किया है। यह ग्रामीण और दलित समाज की विकास की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण बात है।

iii) 82.57 प्रतिशत उत्तरात्ताओं का ये मानना है के गावों के अधिकांश सार्वजनिक स्थान दलितों के लिए खुले किए है। कुआँ, सार्वजनिक तालाब, सार्वजनिक शमशानभूमी, यात्रा, महोत्सव आदि पर दलितों के साथ भेदभाव नहीं किया जाता। किंतु मंदिर प्रवेश के बारे में सकारात्मक परिणाम दिखाई नहीं दिए। 94.93 प्रतिशत उत्तरदात्ताओं ने मंदिर में प्रवेश अबी भी नहीं दिया जाता है यह कहा है। मंदिर प्रवेश एक अपवाद है। अनेक दलित सदस्यों ने बौद्ध धर्म का स्वीकार करने के कारण हम मंदिर में जाते ही नहीं ऐसा कहा हैं। सार्वजनिक स्थानों पर अस्पष्श्यता में कमी आई है। लेकिन आज भी सवर्ण समाज के घर में अस्पृश्यता का पालन किया जाता है। दलित सदस्यों कों बहुत कम प्रसंगों पर वैयक्तिक घरेलु कार्यक्रमों में आमंत्रित किया जाता है।

iv) इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि ग्रामीण क्षेत्रों की आर्थिक, सामाजिक विकास हेतु शासन की और से अनेक योजनॉ संचलित की जाती है, उनका लाभ ग्रामपंचायती आरक्षण के बाद दलित समाज को मिल रहा है। जैसे घरकूल योजना, सड़कें और नाली सुधार योजना, पेयजल आपुर्ति योजना, वृद्धावस्था पेन्शन योजना, विद्युत वितरण आदि। इससें यह स्पष्ट होता है कि दलित प्रतिनिधि अपने समाज के विकास के प्रति जागरुक दिखाई देते है।

v) कुल 70.80 प्रतिशत उत्तरदात्ताओं का मत हैं कि, ग्रामपंचायतों मे दलित और दूर्बल घटक जैसे अनुसूचित जमाति, इतर मागास वर्ग और महिलाओं की सहभागीता होने के बाद जाति के अधार पर जो निर्णय लेते थें उनमें कमी आई हैं। इस से सभी ग्रामीण समुदायों का सामाजिक स्तर सुधार में मदत हो रही हैं।

vi) कुल 74.68 प्रतिशत उत्तरदात्ताओं का मत हैं कि, ग्रामपंचायतों में जिन बैठकों का आयोजन किया जाता है, उनमें दलित प्रतिनिधि जो विचार या मत व्यक्त करते है, उन मतों का आदर किया जाता है। इससे यह स्पष्ट होता हैं कि ग्रामीण राजनीति में दलित

प्रतिनिधिओं की बात सुनकर उनकी समस्याओं को जानकर उसे सुलझाने के लिए अन्य सदस्य सहयोग करते है।

vii) भारतीय समाज में दलितों के प्रति जो भेदभाव का दृष्टिकोण या उनमें पंचायती आरक्षण के बाद बदलाव आया है इस बात को 77.25 प्रतिशत उत्तरदात्ताओं ने मान्य किया है। क्योंकी राजकिय सत्ता प्राप्त करने के लिए दलितों का साथ लेना जरुरी हो गया है। यह ग्रामीण विकास के लिए अच्छा लक्षण है।

उपर्युक्त निष्कर्ष से यह स्पष्ट होता है कि, पंचायती आरक्षण के बाद दलित समाज की सामाजिक स्थिति में सुधार आया है। सामाजिक स्थिति में सुधार केवल पंचायती आरक्षण से ही आया है यह पुरी तरह कहा नहीं जा सकता। दलित समाज में शिक्षा का प्रसार, अस्पृश्यता निर्मूलन कानुन, नौकरी में आरक्षण और अनेक कल्याणकारी योजनाएँ आदि से सुधार की प्रक्रिया तेजी से बदल रही हैं। फिर भी 73 वॉ संविधान अनुसंधान दलितों की सामाजिक स्थिति सुधारने में काफी उपयुक्त रहा है। इसमें कोई संदेह नही है कि इन संस्थाओं में दलितों का सहभाग निश्चित उज्वल रहनेवाला है।

संदर्भ ग्रथः

1) भार्गव बि. एस., 1979. *पंचायतराज सिस्टम ॲन्ड पॉलिटिकल पार्टीज*, नई दिल्ली, आशीश पब्लिशींग हाऊस।

2) बेंते आन्द्रे, *कास्ट, क्लास एण्ड पावर : चेजिंग पॅरर्सस ऑफ स्ट्रटीपिकेशन इन ए तंजोर विलेज*, नई दिल्ली, ओरिएन्ट लोंगमेन।

3) शाहजी, 1975. *पॉलिटिक्स ऑफ शेडयुल्ड ॲन्ड ट्राइन्स*, मुंबई, वोरा ॲन्ड कंपनी।

4) शर्मा के. एल., *रिचेंजिग रुरल स्ट्रॅटीफिकेश स्टिस्टम*, नई दिल्ली, ओरिएन्ट लोगमेंन लि।

5) बसु दूर्गादास, 1996. *भारत का संविधान एक परिचय*, नई दिल्ली, प्रेहिल हॉल ऑफ इंडिया प्रा. लि.।

6) पाण्डे राय, 1989. *पंचायतीराज*, जयपुर, पब्लिशींग हाऊस.।

7) राबडे गिरवसिंह, 2004. *भारत में पंचायतराज*, जयपुर, पंचशील प्रकाशन.।

8) शर्मा वीरेन्द्र प्रकाश, 1999. *ग्रामीण समाजशास्त्र*, आगरा, श्रीराम महेश ॲन्ड कंपनी।

9) शर्मा हरि ओकम, 2008. *ग्रामीण नेतृत्व के उभरते प्रतिमान*, नई दिल्ली, अर्जुन पब्लिशींग हाऊस।

10) सिंह संजय, 2015. *मानवाधिकार और दलित*, नई दिल्ली, ओमेगा पब्लिकेशन्स